25 जून की वो काली रात, जो आज भी डराती है

25 जून का दिवस प्रतिवर्ष हमें स्मरण कराता है भारतीय राजनीतिक इतिहास के एक ऐसे काले अध्याय की जब पूरे भारत में संविधान को ताक में रखकर इस देश की प्रधानमंत्री श्रीमती इंदिरा गांधी ने अपने अहंकार की तुष्टि के लिए आपातकाल लगा दिया था। जी हां हम चर्चा कर रहे हैं आपातकाल यानी इमरजेंसी की, इमरजेंसी अर्थात मीसा की। जी हां इस मीसा को मेंटेनेंस ऑफ इंटरनल सिक्योरिटी एक्ट अर्थात आंतरिक सुरक्षा अधिनियम के नाम से पुकारा गया।

25 जून 1975 से 21 मार्च 1976 तक पूरे 21 माह तक पूरा भारत एक महिला की जिद और अहंकार की भेंट चढ़ कर रह गया था। यह काल पूरे भारतीय इतिहास में इसलिए दुर्भाग्यशाली माना जाता है क्योंकि इस युग में आंतरिक सुरक्षा अधिनियम के अंतर्गत संपूर्ण भारत में 34986 राष्ट्रभक्त कार्यकर्ताओं को नजरबंद किया गया था। मध्य प्रदेश में ही नजरबंद किए गए लोगों की संख्या 5620 थी। इतना ही नहीं तो इस कानून के अंतर्गत देशद्रोह का आरोप लगाकर पूरे भारत में 75,818 और मध्य प्रदेश में 2,521 राष्ट्रभक्त नागरिकों को जेल में बंद किया गया था।

मेरे साथ भी इस विषयक अनेक स्मृतियां हैं जो विचलित कारती हैं परंतु मुझे उन घटनाओं की गंभीरता तब इसलिए अधिक पता नहीं चली क्योंकि वह मेरा बचपन का समय था। हालांकि तब की कुछ कठोर स्मृतियां मुझे आज तक सिहरा देती हैं किंतु इस समय मैं बात कर रहा हूं राष्ट्रीय सुरक्षा कानून अर्थात देशद्रोह में बंदी बनाए गए व्यक्तियों की। विगत दिनों मध्यप्रदेश के नीमच में एक विधि महाविद्यालय की अंतरराष्ट्रीय संगोष्ठी में सहभागिता के लिए मेरा जाना हुआ। स्वाभाविक रूप से अंतर्राष्ट्रीय संगोष्ठी में अनेक पूर्व न्यायाधीश वरिष्ठ अधिवक्ता और विधि के विशेषज्ञ सम्मिलित थे। मुख्य अतिथि के रुप में उपस्थित नीमच के एक अत्यंत श्रद्धेय सज्जन जब उद्बोधन देने के लिए खड़े हुए तो उन्होंने अपनी पुरानी स्मृतियों को खंगालते हुए माइक पर जब यह कहा कि मुझे आपातकाल के समय टेलीफोन के खंभे पर चढ़कर भारत सरकार की टेलीफोन लाइनें काटने के आरोप में जेल में निरुद्ध किया गया था तो उनके इस कथन को सुनकर वर्ष 2020 में युवा हो गई पीढ़ी को घोर आश्चर्य हुआ। बाद में अनेक युवाओं ने इतने वरिष्ठ व्यक्ति के इतने घिनौने आरोप में बंदी होने संबंधी अनेक जिज्ञासाएं प्रकट की और उन्होंने सब का समाधान भी किया।

वास्तव में आज की पीढ़ी इस बात की कल्पना भी नहीं कर सकती कि उन 21 महीनों में पूरे भारत में कैसी खामोशी, श्मशान जैसा सन्नाटा, अत्यधिक निराशा और अज्ञात भय में जी रहे राष्ट्र भक्तों को किस मानसिक प्रताड़ना से गुजरना पड़ा था। यह तो देश का सौभाग्य था कि भारत में जयप्रकाश

नारायण जैसा एक बुजुर्ग राजनेता था जिसने युवाओं और छात्रों को जगा कर तत्कालीन सरकार के खिलाफ समग्र क्रांति का नारा देकर खड़ा कर दिया था। उस युग के छात्र आंदोलन की परिणीति के रूप में इस देश को अनेक युवा राजनीतिज्ञ प्राप्त हुए। इन नवोदित छात्र नेताओं में केंद्र की राजनीति के शिखर पर पहुंचे चंद्रशेखर जी और लालू प्रसाद यादव जैसे राजनेताओं से लेकर वर्तमान में मध्यप्रदेश के यशस्वी मुख्यमंत्री श्री शिवराज सिंह चौहान जैसे युवा तुर्क भी सम्मिलित रहे।

उसी आंदोलन से राजनीतिक क्षेत्र में प्रकट हुए और ध्रुव नक्षत्र बनें श्री अटल बिहारी वाजपेई, श्री लालकृष्ण आडवाणी और समकालीन अनेक वरिष्ठ राजनीतिज्ञ बाद में राष्ट्रीय राजनीति की धुरी बन कर उभरे थे। आपातकाल को हटाने के लिए राष्ट्रीय स्वयंसेवक संघ के स्वयंसेवकों का त्याग पूर्ण सहभाग इस पूरे आंदोलन की एक अनकही कहानी है। उस युग में प्रत्येक संघ का कार्यकर्ता प्राण अर्पित कर देने के भाव से इंदिरा गांधी के द्वारा लादे गए इस काले कानून के विरुद्ध डट कर खड़ा हो गया था। केंद्र में जहां जॉर्ज फर्नांडिस जैसे लोकतंत्र सेनानी को अंग्रेजी हुकूमत की क्रूरता की याद दिलाते हुए लोहे की जंजीरों से जकड़ा गया, रेल के इंजन से बांधा गया ठीक उसी तर्ज पर पूरे भारत में इस आंदोलन में सहभाग करने वाले मीसा बंदियों के साथ जो क्रूरता पूर्ण व्यवहार हुए उनके विषय में चर्चा करते समय रोंगटे खड़े हो जाते हैं।

आपातकाल की पूर्व पीठिका को अगर हम देखें तो ध्यान में आता है कि इलाहाबाद हाईकोर्ट द्वारा इंदिरा गांधी का चुनाव अवैध घोषित कर दिया गया था। तत्कालीन राजनेता स्वर्गीय राजनारायण ने यह याचिका लगाई थी और न्यायालय ने यह माना कि इंदिरा गांधी ने भ्रष्ट आचरण करके चुनाव जीता है। न्यायालय ने सत्ता के दुरुपयोग के पुख्ता प्रमाण होने पर इंदिरा गांधी से प्रधानमंत्री पद छोड़ने का आदेश दे दिया था किंतु सत्ता के दुरुपयोग के अभ्यस्त नेतृत्व ने राष्ट्रपति फखरुद्दीन अली अहमद से देश में आपातकाल लगवा दिया। 25 और 26 जून की उस मध्य रात्रि में गिरफ्तारियों का एक ऐसा भयावह बवंडर चला कि पूरा भारत एक खुली जेल में बदल गया। देशद्रोह के मुक़दमों की बाढ़ सी आ गई। समाचार सेंसर होने लगे। अखबारों पर प्रतिबंध लगने लगा। संवाददाता से लेकर संपादक तक और अखबारों के मालिकों तक हर कोई तत्कालीन प्रधानमंत्री के उस क्रूर कानून का शिकार हुए थे। रेवा प्रकाशन लिमिटेड के 'स्वदेश' जैसे समाचार पत्र तो इस कुचक्र के ऐसे शिकार हुए कि भृत्य से लेकर संपादकों तक और प्रबंधन मंडल के एक-एक सदस्य तक जेल में डाल दिए गए। प्रेस पर ताले पड़ गए। श्रद्धेय माणिक चंद जी वाजपेई के मुख से हमने अनेक बार उस युग के भयावह प्रसंग सुने थे। इतना ही नहीं तो पूज्य मामी जी के देहावसान के पूर्व भी मामा जी घर पर नहीं आ पाए थे और अपनी अर्धांगिनी से उनका जीवन भर का विछोह इस आंदोलन के प्रसाद स्वरूप ही उन्हें प्राप्त हुआ।

कांग्रेस कार्यकर्ताओं के साथ मिलकर पूरे भारत की पुलिस एक प्रकार से कांग्रेस कार्यकर्ताओं का ही दायित्व निभा रही थी। विधि के सारे नियम ताक पर रखकर इसी लूट, खसोट, हिंसा, हत्या, क्रूरता, बर्बरता, दमन, आतंक और भय का ऐसा नंगा नाच चला कि उसे देखकर मुगलों की यातनाएं शर्मसार हो गईं, अंग्रेजों के कारागार भी पानी मांग गए। कोई सोच भी नहीं सकता था कि भारत की एक महिला प्रधानमंत्री देशभक्त नागरिकों के साथ इतना क्रूर आचरण कर सकती हैं। केवल जेल में बंद कर देने मात्र से आज की पीढ़ी अंदाजा नहीं लगा सकती कि वह जेल कितनी भयावह रही होगी। आज राजनीतिक कैदियों को जेलों में टीवी, अखबार, सुस्वादु भोजन, बढ़िया आरामदायक बिस्तर और मुंह मांगी

सुविधाएं प्राप्त होती है किंतु आपातकाल में इस प्रकार की सुविधाएं इन राजनीतिक कैदियों को प्राप्त नहीं हुई थी बल्कि हत्या, लूट जैसे जघन्य अपराधों में बंद कैदियों से भी बदतर यातनाएं इन्हें दी गई थी।

उफ्फ !! वो अव्यक्त वेदना

उस युग में आपातकाल के मीसा बंदियों के मुख से सुने हुए अनेक प्रसंग आज भी मेरे शरीर में झुरझुरी पैदा कर देते हैं। जेल की नारकीय जिंदगी को संक्षेप में समझाएं तो इन कैदियों को मोटे मोटे सरियों वाली छोटी-छोटी अंधेरी कोठरी में बंद किया जाता था जिसे 12 ताड़ी गेट की कैद कहा जाता था। छोटी सी दुर्गंध मारती खोलियों में प्रकाश की कोई व्यवस्था नहीं होती थी। रात्रि में यदि लघुशंका या शौच के लिए जाना हो तो उसी बैरक में एक खड्डा नुमा खुले स्थान पर निवृत होना होता था। जो दो कंबल बिछाने और औढ़ने के लिए दिए जाते थे वे इतने गंदे होते थे कि उन्हें बिछाना और औढना कांटो पर सोने से कम नहीं होता था। सैकड़ों खटमल उन निरपराधों का खून रात भर चूसते रहते थे। यदि रात्रि में स्वास्थ्य खराब हो जाए तो उपचार की कोई व्यवस्था नहीं। प्रातः काल उठकर जिस सार्वजनिक शौचालय में शौच हेतु जाना होता था उनमें दरवाजे केवल आधी ऊंचाई के होते थे। बाहर हौदी से जिस डिब्बे को पानी भरकर ले जाना होता था उसमें जानबूझकर छेद कर दिए जाते थे इस कारण शौचालय में पानी समाप्त होने से पहले ही बाहर निकलना अनिवार्य हो जाया करता था। विद्यार्थियों को पढ़ने की कोई व्यवस्था नहीं थी इसलिए अत्यंत युवावस्था के विद्यार्थी अपनी पढ़ाई से वंचित हो गए और उनकी इस पढ़ाई का छूटना जीवन भर के लिए अभिशाप बन गया।

इंदौर के अक्षय जी सौढाणी और कांतिलाल जी जैन ऐसे ही विद्यार्थी थे जिनकी मूँछ की रेख भी नहीं उभरी थी और उन्हें कारागार में भेज दिया गया था।पत्र लिखकर बाहर भेजना सेंसर का शिकार होता था। पहले जेलर हर पत्र को पढ़ता फिर ही वह डाक में जाता था।समाचार पत्र के दर्शन तो लगभग दुर्लभ से ही थे। इन राजनीतिक बंदियों के सामने ही जब रोटी बनाने के लिए आटा निकाला जाता था तो उसमें बड़ी संख्या में धनेरिये तैरते दिखाई देते थे और जघन्य अपराधों के कैदी इनकी आंखों के सामने ही उस आटे में पानी डालकर रोटियां बनाना शुरु कर देते थे। कच्ची पक्की रोटियों को सेंक कर एक लगभग दुर्गंध मारते सड़े हुए कंबल पर फेंका जाता था जिससे उस कंबल के बाल रोटियों पर चिपक कर थालियों तक की यात्रा संपन्न कर लेते थे। लेकिन इन सब यातनाओं को हम जेल की बड़ी यातनाएं नहीं समझें क्योंकि जघन्य घटनाओं का विवरण इन छोटी छोटी यातनाओं की तुलना में बहुत अधिक दुखद है।

जेल से छूटने के बाद जघन्य यातनाओं के प्रभाव की यदि हम चर्चा करें तो केवल एक उदाहरण पर्याप्त होगा। उत्तर प्रदेश के एक कार्यकर्ता को दोनों पैर मोड़कर और दोनों हाथ जोड़कर कोहनी और घुटनों के बीच से एक मोटा डंडा निकाल कर इस ढंग से फंसा दिया गया था कि यदि वह लुढ़क भी जाएं तो पुनः बैठ नहीं सकते थे और इस अवस्था में उनको इतने लंबे समय तक रखा गया कि जेल से छूटने के बाद परिवार को पलंग पर लेटा कर उनके पैरों में भारी भारी पत्थर बांधकर लटकाना पढ़ते थे। जैसे ही वे पत्थर उनके पैरों से खोल दिए जाते थे उनके पैर घड़ी होकर घुटने उनकी ठोड़ी से लग जाते थे। यह तो केवल एक सामान्य सा उदाहरण है किंतु इसके अतिरिक्त भी अनेक प्रकरण ऐसे थे जिनका विवरण देते समय आत्मा कांप जाती है।

राजनीतिक बंदियों को बर्फ पर रात रात भर लेटा कर रखना, उनकी हाथों की हथेलियों पर कुर्सी के पाए रखकर भारी वजन वाले 2-3 पुलिस कर्मचारियों को बैठाना, गुदाद्वार में मोटे डंडे डाल देना और रक्त स्राव होने पर उसमें नमक और मिर्ची लगा देना, 36 घंटे इन कार्यकर्ताओं को प्यासा रखना और पानी मांगने पर उनके मुंह में थानेदार द्वारा मूत्र विसर्जन कर देना इस तरह के घटनाक्रम 10-20 और सैकड़ों की संख्या में नहीं थे अपितु हजारों प्रकरण थे। अनेक प्रसंग तो कार्यकर्ता गण ठहाकों के साथ सुनाते थे किंतु उन से पैदा हुए कष्ट की कल्पना हम आज नहीं कर सकते। किसी कार्यकर्ता की पत्नी इस भयावह हादसे के कारण उन्हें छोड़कर चली गई। परिवार के परिजन बीमार होकर मृत्यु को प्राप्त हो गए। कहीं कॉंग्रेस के लोगों ने संघ और राष्ट्रभक्त कार्यकर्ताओं को सार्वजनिक रूप से प्रताड़ित करते हुए उनके बाल मुंडकर गंजा कर दिया। कहीं संघ के स्वयंसेवकों के नाम पते पूछने के लिए परिवार के लोगों के हाथ पैर तोड़ दिए गए तो किसी की दाढ़ी मूछें मुंड दी गई।

मध्य प्रदेश के लोकतंत्र सेनानियों में आदरणीय मेघराज जी जैन, डॉ लक्ष्मी नारायण जी पांडे, दादा बेलापुरकर, श्री कन्हैया लाल जी मौर्य, श्री कृष्ण कुमार जी अस्थाना, श्री हिम्मत कोठारी सहित अनेक ऐसे नाम हैं जिनको एक साथ इस आलेख में उल्लेख करना भी संभव नहीं। इतना ही नहीं तो अनेक पिता-पुत्र एक साथ आपातकाल में जेल में बंद रहे ऐसे जोड़े भी मध्यप्रदेश में कई थे। स्वर्गीय अंबालाल जी जोशी और उनके पुत्र डॉ रघुनंदन जोशी हों या रतलाम के डॉक्टर मोघे जी और उनके पुत्र विनय मोघे जी हों, दत्ता जी मांदले और उनके पुत्र अनिल मांदले सहित ऐसे अनेक नाम इस समय स्मरण आते हैं।

समाज का प्रतिरोध प्रत्येक स्तर पर इस ढंग से चल रहा था कि आपातकाल का विरोध करने के लिए लोग किसी भी हद तक जाने के लिए तैयार थे। ग्वालियर का एक प्रसंग तो इस हिम्मत को दर्शाने के लिए पर्याप्त है। हम सब जानते हैं कि ग्वालियर का तानसेन समारोह संगीत का विश्व प्रसिद्ध कार्यक्रम होता है। आपातकाल के दौर में तत्कालीन नेतृत्व के विरुद्ध अपना बुलंद स्वर प्रकट करने के लिए चलते तानसेन समारोह के मंच पर ग्वालियर के एक युवा कार्यकर्ता श्री सुभाष गोयल मंच पर चढ़े और आपातकाल मुर्दाबाद, इंदिरा गांधी मुर्दाबाद के नारे लगाने लगे। पुलिस ने उन्हें पकड़कर इतना अधिक पीटा और मारा कि आखिरकार उस पिटाई के कारण उस नौजवान की मृत्यु हो गई। वास्तव में इस प्रकार की यातनाओं के शिकार बने कार्यकर्ताओं के परिवारों का संबल बन रहे थे कुशाभाऊ ठाकरे और हरीभाऊ जी जोशी जैसे अनेक कार्यकर्ता। वे स्वयंसेवकों का उत्साहवर्धन करने के लिए सदैव उनके साथ खड़े रहते थे।

उस संघर्ष ने अपने कार्यकर्ताओं का साहित्यबोध भी जागृत कर दिया था। मुझे स्मरण आता है स्वर्गीय हरिभाऊ जोशी ने उस युग में एक कविता लिखी थी-
मैं समर्पण के लिए उत्सुक
यहां पर मांग लो कितना लहू तुम मांगते हो
आज सत्ता के नशे में चूर हो
तुम बुद्धि से हर तरफ से ही दूर हो तुम
न्याय की तुमने उड़ाई धज्जियां
दंभ से अन्याय से भरपूर हो तुम

यह न समझो सत्य आवाज मेरी
झूठ के आक्रोश में तुम दाब दोगे
और कारागार में बंदी बनाकर
क्रांति के बढ़ते चरण तुम बांध दोगे
मत समझना यह समर्पण हार है
तोल लूं कितना करारा वार है
विश्व देखेगा समय के पृष्ठ पर
स्वाभिमानी रक्त की यह धार है
भूलना मत यह नशा महंगा पड़ेगा
दंभ का मस्तक यहां गहरा पड़ेगा

मुझे इस बात का आश्चर्य होता है कि यह जो कार्यकर्ता उस युग में इतने ओजयुक्त गीत और कविताएं लिख रहे थे उनका साहित्य से दूर-दूर तक कोई लेना-देना नहीं था किंतु फिर भी उनकी कविताओं के स्वर मुझे स्वतंत्रता संग्राम के क्रांतिकारियों के स्वर से मिलते जुलते प्रतीत होते हैं । वास्तव में इसी घनीभूत पीड़ा को लोकतंत्र सेनानियों ने अपनी पंक्तियों में प्रकट किया था। यह गीत और कविताएं स्वयंसेवकों को अपना सर्वस्व समर्पण कर देने की प्रेरणा दे रहे थे। यही कारण है कि आपातकाल के दौरान अथवा वहां की पीड़ाओं के कारण से अस्वस्थ होकर जेल से बाहर आने के बाद भी हुतात्मा हुए कार्यकर्ताओं की एक बड़ी मालिका हमें दिखाई देती है। केवल मध्य प्रदेश की ही चर्चा करें तो श्री शालिग्राम आदिवासी खरगोन, श्री प्रभाकर राजे कटंगी, श्री परशुराम रजक जबलपुर, श्री सोमनाथ खेड़ा सिवनी, श्री हशमत वारसी भोपाल, श्री भैरव भारती नागदा, श्री घीसा लाल गोयल नलखेड़ा, श्री अमर सिंह जी भूतिया देवास, श्री ठाकुर लाल जेठवानी उज्जैन जैसे अनेक सेनानियों की स्मृतियां आज भी आंखें भिगो देती हैं। इन देशभक्तों के बलिदान की संख्या पूरे भारत में बहुत बड़ी मात्रा में रही। उत्तर प्रदेश में 26, मध्य प्रदेश में 16, बिहार में 15, महाराष्ट्र में 14, पश्चिम बंगाल में 11, कर्नाटक में 8, केरल में 6, पंजाब में 6, दिल्ली में 4, असम में 2, गुजरात में 2, हिमाचल में 2, जम्मू कश्मीर में 2, राजस्थान में 2, चंडीगढ़ में 1, और तमिलनाडु में 1 कार्यकर्ता के हुतात्मा होने के समाचार उन दिनों प्राप्त हुए थे। दुर्भाग्य यह कि इतने बड़े प्रत्यक्ष नरसंहार की दोषी को कभी इसका दंड नहीं मिला।

आज की पीढ़ी के लोगों को यह लग सकता है कि कारावास से बाहर आने के बाद आखिरकार इन कार्यकर्ताओं की मृत्यु क्यों हुई होगी ? इस प्रश्न के समाधान के लिए हम सबको आपातकाल का काला इतिहास विस्तार से पढ़ना चाहिए। हम आज इस बात की कल्पना भी नहीं कर सकते कि उस काल की सर्वमान्य राजनीतिक महिला नेत्री परम आदरणीया राजमाता सिंधिया जी को भी सीलन और दुर्गंध से युक्त एक ऐसे बैरक में रखा गया था जिसमें पागल, दुर्दांत अपराधी और वेश्याओं को रखा गया था किंतु राजमाता सिंधिया जैसी मातृशक्ति ने भी उस युग में इस संघर्ष को अत्यंत निर्लिप्त भाव से स्वीकार किया था। राजमाता गायत्री देवी ,श्रीमती मृणाल गोरे, श्रीमती मालती देवी चौधरी जैसी अनेक बहने उस काल में जिस प्रकार के कठोर कारागार को झेल कर आई थीं वह अत्यंत भयावह था। पुरुष कार्यकर्ताओं के साथ हुए अत्यंत विभत्स घटनाक्रमों ने उन्हें मौत की ओर धकेला था। किसी कार्यकर्ता को सीधे बिजली के झटके दिए गए तो किसी कार्यकर्ता के मूत्र विसर्जन स्थान पर 10- 10 किलो के

पत्थर लटका दिए गए। भयावह पीटाई के दृश्यों का विवरण बताता है कि एक साथ 15 -15/ 20 – 20 संतरी कार्यकर्ताओं को लगातार बेंतों और लाठियों से पीटा करते थे। खून से लथपथ हो जाने और बेहोश हो जाने का भी उन पर कोई असर नहीं होता था। किसी के दांत टूटते थे तो किसी का सिर फट जाता था। 16- 16 और 18-18 टांके आना सामान्य बात हुआ करती थी।

आपातकाल को हटाने के लिए जेल में बंदी बने स्वयंसेवकों के अतिरिक्त बाहर भूमिगत रहकर उस संघर्ष को परवान चढ़ाने वाले कार्यकर्ताओं का योगदान भी अपने आप में अद्भुत रहा। सरकार के विरुद्ध भूमिगत रहकर संघर्ष करने वाले कार्यकर्ताओं में रघुनंदन जी शर्मा और बालमुकुंद जी झा जैसे अनेक कार्यकर्ताओं के स्मृति प्रसंग आज भी मुझे रोमांच से भर देते हैं। मैं रतलाम जिले के एक छोटे से स्थान आलोट का निवासी हूं। मुझे आज भी स्मरण आता है कि उस समय आलोट के श्री शांतिलाल जी तलेरा, श्री पंचम लाल जी जैन, श्री शांतिलाल जी डूंगरवाल सहित मेरे पिताजी श्री जीवन लाल जी दवे भूमिगत रहकर इस पूरे आंदोलन को सक्रिय रखने के दायित्व का निर्वाह कर रहे थे। पिताजी क्षिप्रा नदी के किनारे ग्रामों और जंगलों में भटककर कार्यकर्ताओं से देर रात अंधेरे में मिलने आते थे।

मेरी अत्यंत बाल्यकाल की भयावह स्मृतियों में आज भी वे दृश्य दौड़ने लगते हैं जिनमें लावरे सरनेम वाले एक थानेदार का आगमन हमारे घर में बगैर समय देखे होता था। पिताजी को गिरफ्तार करने के लिए वह थानेदार केवल दिन में ही नहीं बल्कि कई बार मध्य रात्रि में भी अचानक आकर पूरे घर का सामान बिखेर दिया करता था। एक-एक कोठी, एक-एक पेटी को वह खोल खोल कर सारे सामान पूरे घर में फैला कर जाता था। इतना ही नहीं तो हम बच्चे जब भोजन कर रहे होते थे तो वह आकर हमारी भोजन की थालियों को लात मारने से भी नहीं हिचकता था। उस भयावह दौर में भूमिगत रहकर सरकार के विरुद्ध पर्चे बांटने और रात्रि के अंधकार में सरकारी कार्यालयों की दीवारों पर पोस्टर चिपकाना तथा साइक्लोस्टाइल से छोटे-छोटे पत्र तैयार करके घर घर में फेंक कर आने जैसे काम उस समय यही सारे भूमिगत कार्यकर्ता कर रहे थे।

पीड़ित परिवारों के अनेक प्रसंग तो आज भी हमें द्रवित कर देते हैं। जबलपुर की पूर्व सांसद जयश्री बनर्जी दीदी को और उनके पति को जब गिरफ्तार किया गया था तब उनका बेटा दीपांकर मात्र 4 वर्ष का था। हम कल्पना कर सकते हैं एक महिला प्रधानमंत्री सहज मातृत्व के उस भाव को भी पहचान नहीं पाई और यातनाओं के कारागार में इन सब कार्यकर्ताओं को डालती रही। कुछ युवाओं को तो विवाह की वेदी पर से दूल्हे के वेश में ही उठाकर कारागार में डाल दिया गया। सुसनेर के श्री गिरिराज शरण शर्मा जो कि अधिवक्ता थे उनके साथ हुआ यह घटनाक्रम इस बात को सिद्ध करता है कि उस युग की सरकार ने तानाशाही का कोई तरीका छोड़ा नहीं था। भूमिगत आंदोलन के सेनानियों में श्री कुशाभाऊ ठाकरे के साथ प्यारे लाल जी खंडेलवाल, नारायण प्रसाद जी गुप्ता, मोरेश्वर रावजी गदरे, कैलाश नारायण जी सारंग, हरि मोहन जी मोदी जैसे अनेक कार्यकर्ता लगातार संघर्ष कर रहे थे। नारायण प्रसाद जी गुप्ता तो बताते रहे कि वह पायजामा और बनियान पहने 3 दिन तक कार्यकर्ताओं के घरों के दरवाजे खटखटाते रहे किंतु हर घर से बच्चे बाहर निकल कर एक ही बात कहते थे पापा जेल में हैं।परिचय के अभाव में आखिर इन भूमिगत कार्यकर्ताओं कहाँ ठौर मिलता ?

वास्तव में इन संघर्षों की दास्तानें जितनी मात्रा में लिखी जाना चाहिए उतनी मात्रा में लिखी नहीं गई

किंतु फिर भी साहित्य क्षेत्र में होने के कारण इस अवसर पर मैं साहित्यकारों के साथ उन कार्यकर्ताओं को भी प्रणाम करता हूं जिन्होंने अपनी लेखनी इस आपातकाल के विरुद्ध उठाई थी। नागार्जुन की "जयप्रकाश पर पड़ी लाठियां लोकतंत्र की" माधव शंकर इंदापुरकर जी द्वारा लिखित "आपातकाल इतिहास का कालापन्ना" सर के पी सिंह जी द्वारा लिखित "स्वतंत्रता संग्राम सेनानी बनाम लोकतंत्र प्रहरी" गुलशन सेठिया जी का आलेख "आपातकाल एक प्रशिक्षण वर्ग" पूर्व सरसंघचालक सुदर्शन जी द्वारा लिखित "अरे यह तो सत्य की लड़ाई है" शरद यादव द्वारा लिखित "इस देश में कोई हिटलर नहीं बन सकता" से लेकर रामलीला मैदान में सस्वर गाया गया रामधारी सिंह दिनकर का गीत "सिहासन खाली करो कि जनता आती है" तक का उल्लेख करते हुए ऐसे सभी लेखनीधर्मी कार्यकर्ताओं को इस आलेख के माध्यम से मैं अपना विनम्र प्रणाम अर्पित करता हूं। वास्तव में आपातकाल के इस अंधेरे युग के प्रसंगों को लिखना बड़ा कठिन कार्य है।

इन सबको लिखने के लिए कलम में स्याही के साथ अपने खारे आंसुओं को मिलाना पड़ता है। आपातकाल की स्मृतियों को एक बार पुनः स्मरण कराने का तात्पर्य केवल इतना है कि नई पीढ़ी जान सके कि आज वर्ष 2021 में टीवी चैनलों पर और अखबारों में बड़े-बड़े लेख लिख कर अथवा प्रेस वार्ताओं को आयोजित करके कांग्रेस के जो नेता आज के प्रधानमंत्री जी पर हिटलर होने का आरोप मढते हैं और बोलने की स्वतंत्रता छीनने का गंदा आरोप लगाते हैं उन्हें अपना स्वयं का यह घृणित इतिहास पढ़ लेना चाहिए। बोलने की आजादी छीनना, प्रेस की स्वतंत्रता को बाधित करना और निरपराध नागरिकों को क्रूर यातनाएं देना क्या होता है यह जानना है तो कांग्रेस के कार्यकर्ताओं को अपना ही पुराना इतिहास पढ़ लेना चाहिए। इसकी वास्तविक परिभाषाएं उन्हें सहज रूप से समझ आ जाएगी। 25 जून को आपातकाल की वर्षग्रंथि के अवसर पर मैं हूतात्मा हुए कार्यकर्ताओं को श्रद्धा सुमन अर्पित करता हूं। उन कार्यकर्ताओं को भी विनम्र प्रणाम करता हूं जो यातनाओं को भोग कर बाद में पुनः समाज और राष्ट्र कार्य में सक्रिय हुए और आज भी हम सबको मार्गदर्शन प्रदान कर रहे हैं।

पूज्य बाबा साहब अंबेडकर के द्वारा निर्मित संविधान को इससे बुरे दिन कभी न देखना पड़े यही प्रार्थना ईश्वर से करते हुए इस आलेख को समाप्त करता हूं।